Volume-4, Issue-10, October 2017 ISSN: 2349-7637 (Online)

RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)

Research Paper

Available online at: www.rhimrj.co.in

भीष्म साहनी का कथा संसार

डॉ प्रभा शर्मा

सह आचार्य हिन्दी विभाग राजकीय कला कन्या महाविध्यालय महाविद्यालय कोटा (राजस्थान)

भीष्म साहनी आधुनिक हिंदी साहित्य के लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकार हैं जिनकी प्रतिभा विविधमुखी है। उपन्यास, कहानी, नाटक और निबंध आदि विधाओ में मौलिक सृजन उनकी प्रतिभा का परिचायक है। उन्होंने अंग्रेजी में भी साहित्य सृजन किया है और अनुवाद के क्षेत्र में भी उनका सराहनीय योगदान रहा है। उन्होंने साहित्य की जिस विधा को भी लिया उसमें वह अपनी अलग और विशिष्ट पहचान बनाने में सफल सिद्ध हुए हैं। वस्तुतः भीष्म साहनी के पास जीवन के अनुभवों की व्याकता और गहनता इतनी अधिक है कि वह उसकी अभिव्यक्ति कभी कहानी के रूप में, कभी उपन्यास के रूप में, कभी नाटक के रूप में और कभी निबंधों के रूप में करते हैं।इसी कारण उनका साहित्य हिंदी की अमूल्य निधि बन गया है।

जीवन निरंतर गतिशील है जिसको उसकी गतिशीलता में देखना और परखना कठिन भी है और आवश्यक भी है परंतु यह तभी संभव है जब रचनाकार उससे निरंतर सम्पृकत रहे। भीष्म साहनी में यह विशेषता भली-भांति दृष्टिगोचर होती है। क्योंकि वह जीवन से निरंतर जुड़े रहने के कारण ही प्रत्येक परिवर्तित स्थिति को उसकी समग्रता में पकड़ने में सफल हुए हैं। भीष्म साहनी केवल मध्यवर्गीय मानसिकता को ही मंडित करने या उसे विस्थापित करने का प्रयास ही नहीं करते है वरन् वह मध्यवर्गीय जीवन के विभिन्न अंतर्विरोधों का खुलासा भी करते हुए इस वर्ग की चेतना को जनतांत्रिक मूल्यों से जोड़ने का प्रयास भी करते हैं। वह मध्यवर्गीय जीवन को अपनी लेखनी का विषय बना कर लिखते हुए भी जन-सामान्य के शोषण, उत्पीड़न और उनकी विडम्बनाओं को दूर करने के लिए किये जा रहे संघर्षों से भी तटस्थ नहीं रहते। यही कारण है कि उनकी सृजनशीलता को वर्ग-विशेष तक सीमित करना न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता।

भीष्म साहनी का साहित्य अत्यंत व्यापक है जो उनकी अमर-कीर्ति का दृढ स्तम्भ है।उनके साहित्य में जीवन-मूल्यों के विभिन्न चित्र प्राप्त होते हैं क्योंकि वह मानव-जीवन के कुशल चितेरे के रूप में प्रतिष्ठित हैं। वह एक सफल शिक्षक, चिंतक और मानव जीवन के प्रति गहन आस्था रखने वाले एक सफल साहित्यकार हैं। परिणामतः उनके साहित्य में प्रेम, स्नेह,ममतत्व, करुणा, समर्पण, त्याग, विश्वास, निष्ठा और उदारता आदि मानवीय गुणों का चित्रांकन होने के साथ-साथ छल, प्रपंच, घृणा, अविश्वास, संघर्ष, वेदना और कुंठा केभी चित्र सहज ही प्राप्त होते हैं। उनकी रचनाओं को साहित्य की विभिन्न विधाओं के अंतर्गत रखा जा सकता है।

'झरोखे' ,'कड़ियां' ,'तमस' ,'बसंती' और 'मय्यादास की माँड़ी उनके लब्ध प्रतिष्ठउपन्यास हैं। 'भाग्य रेखा' ,'पहला पाठ' ,'भटकती राख' ,'पटरियाँ' ,'वाड्.चू' ,'शोभा यात्रा' ,'निशाचर' और 'पाली' उनके प्रसिद्ध कहानी-संग्रह हैं। 'हानूष' ,'कबीरा खड़ा बाजार में' और 'माधवी' उनके कीर्ति प्रसारक नाटक हैं। 'अपनी बात' उनका निबंध संग्रह हैं। 'गुलेल का खेल' और 'वापिसी' बाल साहित्य है। 'टॉलस्टाय' का 'पुनरुत्थान' ,'लंबी कहानियाँ' निकोलाई आस्माबस्की का 'यह जीवन' आहतमातोब का 'पहला अध्यापक' आदि प्रमुख रचनाएं उनके अनूदित साहित्य के अंतर्गत आती हैं ।यशपाल, रमाकांत, पंजाबी कथाकार नवजोत सिंह और गुरुदयाल सिंह की पंजाबी कहानियों का अंग्रेजी अनुवाद भी किया गया है।

भीष्म साहनी की यह विशेषता है कि वह इन रचनाओं में सामाजिक जीवन की विभिन्न विसंगतियों और अंतर्विरोधोंके चित्रण तक ही सीमित नहीं रह जाते वरन् वह उस मानवीय जिजीविषा का भी अंकन करते हैं जिसके कारण उनके पात्र अपने अस्तित्व पर आए संकटों और विपत्तियों का सामना करने के लिए भी कटिबद्ध होते दिखाई पड़ते हैं। समाज में किसी भी मनुष्य के विकास में आर्थिक कारण अधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं क्योंकि यह संसार अर्थमूलक है। इसलिए आर्थिक संकटग्रस्त मनुष्य की चेतना का सहज विकास भी अवरुद्ध हो जाता है। अर्थ के असमान वितरण के कारण एक वर्ग का जीवन निरंतर गरीबी की रेखा से भी बहुत नीचे होता जा रहा है। परिणामस्वरूप 'पीढ़ी दर पीढ़ी' चलने वाली अभाषों की यह परम्परायें आज भी जन सामान्य को त्रस्त कर रही हैं ।

भीष्म का पहला उपन्यास 'झरोखे' है जो उनके उपन्यासकार रूप को साहित्य में प्रतिष्ठित करता है। यह सन् 1967ई.में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में उन्होंने बचपन में देखेहुए पारिवारिक और सामाजिक परिवेश को चित्रित किया है जो वह न केवल भीष्म जी का पारिवारिक और सामाजिक परिवेश रहा है बल्कि वह तत्कालीन समाज में भारतीय जन-जीवन को, विशेषतः उत्तर-पश्चिम भारत में एक क्रांतिकारी सामाजिक आंदोलन के रूप में भी प्रभावित करता रहा है। उपन्यासकार भीष्म जी इस परिवेश से अधिक प्रभावित हुए जिसको वह स्वयं स्वीकार करते हैं -"मेरे पिता कट्टर आर्य समाजी थे। स्वाभाविक है कि हम उस वातावरण में रहे और फलस्वरुप उसका मेरे मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा।" 1इसी आर्यसमाजी प्रभाव से प्रभावित उनके बचपन की घटनाओं, जीवन-अनुभवों और संस्कारों की अभिव्यक्ति 'झरोखे' उपन्यास में हुई है। 'झरोखे' उपन्यास का प्रमुख पात्र 'तुलसी' है जिसके चारों ओर इस उपन्यास की कहानी घूमती

है। भीष्म साहनी इस पात्र से सर्वाधिक प्रभावित हुए हैं। इस पात्र के संबंध में स्वयं उपन्यासकार साहनी का अभिमत है - "शायद मेरा एक ही पात्र है जो कभी स्त्री का, कभी पुरुष का तो कभी युवक अथवा युवती का रूप लेकर पन्नों पर उतरता है। जब भी उसके बारे में सोचता हूं तो उद्वेलित सा महसूस करता हूँ। कहीं पर वह व्यक्ति अपने परिवेश में सही नहीं बैठता, उखड़-सा जाता है, उसमें रच-बस नहीं पाता, अपने परिवेश में रहते, सांस लेते हुए भी उसका मेल नहीं बैठता। शायद उसी में उसके भाग्य की विडंबना होती है।शायद मेरे सभी पात्र ऐसी ही परिस्थितियों में पनपते रूप लेते हैं।" [2]

भीष्म साहनी का दूसरा उपन्यास 'कड़ियां' सन् 1970ई. में प्रकाशित हुआ।स्वतंत्रता के उपरांत भारतीय समाज में जिस तेजी के साथ मध्यवर्ग का अंतर्विरोध उभरा है।मध्यवर्ग में जो विसंगतियां उत्पन्न हुई हैं, इसमें उन्हें देखा जा सकता है। इस उपन्यास में नारी विषयक दृष्टिकोण ही अधिक उभर पाया है जो उसके चरित्र का पहलू है। 'कड़ियाँ' में प्रमिला पति से तलाक लेने के बाद मानसिक संतुलन खो बैठती है लेकिन अस्पताल में दूसरा बच्चा होने के बाद वह फिर से सहज होने लगती हैं। उसके असंतुलित होने का कारण पति से नहीं बल्कि अपने पहले बच्चे से अलग होना था। भीष्म साहनी अपने प्रत्येक पात्र के मनोविज्ञान को उसके द्वंद्वों के द्वारा मूल मानवीय विशेषताओं के अंतर्गत उसकी सामाजिक और पारिवारिक स्थिति के अनुसार ही चित्रित करते हैं। वे बचपन के बने संस्कारों को महत्वपूर्ण मानते हैं। इस संदर्भ में उपन्यासकार स्वीकार करते हैं -"बहुत कुछ है जो अपने बचपन से हम संस्कार स्वरुप ग्रहण करते हैं,ज्यों-ज्योंबालक अपने परिवेश में आंखें खोलता है, ज्यों-ज्यों वह कुछ देखता है, सुनता है वही संस्कार बन जाता है। आकाश की नीलिमा, ठंडी हवा के झोंके, गली में घूमते भिखारियों की आवाजें जहां कहींकोई छोटी सी घटना दिल को अथवा चेतना को छू जाती,वही अपनी छाप छोड़ जाती है। इसके अतिरिक्त बचपन में माता-पिता और परिवेश का असर बहुत गहरा पड़ता है। मैंने जिस माहौल में आंखें खोलीं, वह ठहरा हुआ दौर नहीं था। उसमेंहलचल थी, नए-नए विचार समाज को आंदोलित कर रहे थे। मेरे पिताजी आर्य-समाजी विचारों के थे। घर के अंदर सदा समाज-सुधार की चर्चा चलती रहती। दूसरी ओर स्वतंत्रता आंदोलन भी जोर पकड़ रहा था। जल से जलूसों का जमाना था। भावात्मकता से भरा वातावरण हमारे चारों ओर था। उसका प्रभाव मुझ पर और मेरे लेखन पर जरूर पड़ा।" [3]

भीष्म साहनी का तीसरा उपन्यास 'तमस' सन् 1973ई. में प्रकाशित हुआ। जिसकी मुख्य विषय-वस्तु भारत-विभाजन की त्रासदी है। सन 1947-48ई. में भारतीय समाज विभाजन की इस त्रासदी को भोगता है।उपन्यासकार साहनी ने अपने इस उपन्यास में सांप्रदायिकता के वर्ग-चरित्र को जिस रूप से उभारा है, वहइस उपन्यास को इसकी ऊंचाईपर पहुंचनेमें अधिक सफल हुआ हैं।साम्प्रदायिकता के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, वर्गीय चरित्र तथा वर्गीय मानवीय संबंधों की गहराई में पैठकर भीष्म जी ने सांप्रदायिकता के पीछे हुए शोषक चरित्र को अधिक नंगा कर दिया है। इस उपन्यास के संबंध में कृष्णा सोबती का कथन है – तमस में भीष्म ने इस खौफनाक घटना को बड़ी बारीकी से निहारा है और फंसे हुए इतिहास और उसके राजनीतिक संदर्भ को लीक देकर कुछ दिनों को उपन्यास के कलेवर से बाँधने की कोशिश की है और इसमें शक नहीं कि यह बड़ी कोशिश थी। कोई भी बड़ी कोशिश महज़ कोशिश नहीं होती, इसके पीछे अवस्थाएं, संस्कार और मूल्य होते हैं जिससे भीष्म जैसा व्यक्ति बंधा होता है।" [4]इस उपन्यास में सांप्रदायिक तनाव तथा तदनुरूप दंगों की विभीषिका से विभ्रान्त मनुष्य की अनेक कहानियां को मिलाकर उन्हें एक बड़ी मानवीय त्रासदी का रूप देने की कोशिश है।इस मानवीय त्रासदी के कारणों, प्रभावों तथा घटनाक्रम में ऐतिहासिक तथ्यगत प्रामाणिकता के साथ-साथ सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक सच्चाई को प्रमुखता दी गई है। डॉ. चमनलाल का मत है – "तमस की कथावस्तु में दो कथाओं यानी शहर और गांव की कथाओं का संयोजन किया गया है और रिफ्यूजी कैंप के माध्यम से दोनों कथाओं को एक सूत्र में पिरोया गया है। कथा विवरणात्मक ढंग से कही गई है और कुल पांचदिनों की घटनाओं और वातावरण पर कथा निर्मित की गई है। कुछ हद तक विवरणात्मक शैली में सपाटबयानी दाखिल हो गई है। कहीं-कहीं कथा-संयोजन कैमरे के ढंग से चलता है अर्थात मूवी कैमरे की तरह लेखक अलग-अलग स्थितियों की तस्वीर-सी खींचते चलता है और कहीं कहीं तस्वीरें एक दूसरे से असम्बद्ध तो नहीं लेकिन सायास जोड़ी हुई लगती हैं .... कथा के नाटकीय तत्व पर भी विवरण शैली का असर है।" [5]

'तमस' के सात वर्ष बाद अर्थात् 1980 में 'बसंती' का प्रकाशन हुआ। 'तमस' में विभाजन की त्रासदी है तो 'बसंती' में झुग्गी-झोपड़ियों को उजाड़ने की विभीषिका है। 'तमस' में राजनीति का सांप्रदायिक चरित्र सामने आता है तो 'बसंती' में राजनीति का जन-विरोध चरित्र सामने आता है। बसंती का चरित्र दिल्ली तक ही सीमित ना रह कर देश के पूरे गांव और शहर में फैले हुए निम्नवर्गीय चारित्र का प्रतीक बन जाता है। आज निम्न वर्ग का जीवन आर्थिक अभाव के कारण दयनीय बनकर रह गया है क्योंकि उसके पास जीवन की अनिवार्य सुविधाओं का अभाव है। आर्थिक अभाव से घुटते हुए इस वर्ग के विभिन्न चित्र भीष्म साहनी के द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं। उपन्यासकार साहनी ने 'बसंती' उपन्यास में निम्नवर्गीय व्यक्तियों के धूल-धूसरित जीवन को अपनी कथा का विषय बनाया है। इस संबंध में स्वयं भीष्म साहनी का कथन है – "दिल्ली से दूर जहां कहीं सूखा पड़ता है या बाढ़ आती है, वहीं से लोग दिल्ली आने लगे। इन राज मजदूरों की बारबार उजरती बस्तियां एवं उनकी यातनामय जिंदगी का यथार्थ चित्र बसंती है।" [6]'बसंती' में गांव का चित्रण नहीं है परंतु गांव से आए लोगों के ग्रामीण संस्कार अवश्य ही कथा का अंग बने हैं। स्त्री के प्रति मध्ययुगीन व्यवहार को विशेष उद्देश्य से उद्घाटित किया गया है तथा निम्न वर्ग की गांव और शहर दोनों जगहों पर एक जैसी गति चित्रित की गई है, उसे अर्थात स्त्री को दोनों जगहों पर बेघर किया जाता है। इसीलिए ग्रामीण और शहरी प्रभावों के द्वन्द्व में लेखक का उद्देश्य उनके वर्ग-स्वरूप को उद्घाटित करने का रहा है। इस द्वन्द्वको ग्रामीण परिवेश में ले जाकर अर्थात कथा को दूर-दराज के गांवों तक से फैलाकर

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)

अधिक विस्तृत आधार दिया जा सकता था। 'बसंती' उपन्यास के संबंध में रविंद्र गासो का कथन है – "बसंती अपनी भरपूर कलात्मकता तथा संप्रेषणीयता में स्त्री और निम्न वर्ग की वास्तविक स्थिति को उसकी विभिन्न विशेषताओं, कमजोरियों तथा संभावनाओं के साथ प्रस्तुत करने वाला वर्ग चेतना का उपन्यास है जिसमें लेखक भारतीय सर्वहारा क्रांति की यथार्थ शक्ति को बसंती के माध्यम से दैदीप्यमान दीपशिखा के रूप में देखता है।" [7]

'मय्यादास की माँड़ी' (1988) पंजाब पर अंग्रेजों के प्रभुत्व के बाद उजड़ गई जमीदारी की कारूणिक गाथा है। 'मय्यादास की माँड़ी' को ऐतिहासिक काल चक्र में बदलते हुए सामाजिक संबंधों का एक अच्छा दस्तावेज कहा जा सकता है जिसमें विशुद्ध देशभक्त और निपट गद्दार, चापलूस और स्वाभिमानी दोनों प्रकार के पात्रों के दर्शन कराए गए हैं।इस उपन्यास के द्वारा डेढ़ सौ वर्ष पुराने पंजाब का परिवेश चलचित्र की भांति प्रत्यक्ष ही देखा और समझा जा सकता है जो पाठकों को अपनी ओर बरबस आकर्षित किए बिना नहीं रहता। आज के युग में भौतिकवादी चेतना के कारण आपसी संबंधों को निर्धारित करने में धन की महत्ता अपरिहार्य है और हमारे पारिवारिक संबंध भी अर्थव्यवस्था पर ही आधारित हो गए हैं। हमारी पारिवारिक संबंधों के विघटित होने का मुख्य कारण अर्थ की महत्ता है।इस संबंध में स्वयं भीष्म साहनी की धारणा है – "धन से ही व्यक्ति अपनी आकांक्षा की पूर्ति कर सकता है।" [8] धन की गरिमा की ही व्यक्ति को जन-सामान्य से अलग विशिष्ट बना देती है क्योंकि "धनी आदमी के विचार साधारण विचार नहीं होते, उसके चेहरे पर हिलती एक-एक मांसपेशी से बड़प्पन झलकता है। उसकी गहन विचारों तक साधारण आदमी की पहुंच ही संभव नहीं है।" [9]

भीष्म साहनी के उपन्यासों में 'कड़ियाँ' (1970), 'कुंतो' (1993) और 'नीलू, नीलिमा, नीलोफर' (2000) रचना काल के अंतर के बावजूद एक ही श्रृंखला के उपन्यास हैं जिनमें स्त्रियों की नियति और उनकी समस्याओं को उठाने का सफल प्रयास है। 'कुंतों' उपन्यास की कुंतों स्त्री की यातना का सबल चरित्र बनकर उभरती है जो पारिवारिक जीवन के संताप को झेलती हुई समाज को कटघरे में खड़ा करती है।कुंतों, सुषमा, थुलथुल जैसी स्त्रियां इसे यातना को सहती हैं।विद्या भी इनमें से एक है। कम उम्र की अनचाही शादी, फिर लगातार बच्चों का जन्म। हवस का शिकार बनती रहती स्त्री एक दिन समझ जाती है कि वह तो सिर्फ एक वस्तु ही है पुरुष की वासना यहीं समाप्त नहीं होती,वह बढ़ती जाती हैं और इसी तरह अनेक जिंदगियाँ या दफन होती रहती हैं।

भीष्म साहनी के उपन्यासों की आखिरी कड़ी के रूप में आया 'नीलू, नीलिमा, नीलोफर' उपन्यास प्रेम और विवाह का समस्या पर विचार करता है और संप्रेषित करता है कि प्रेम हो या विवाह इसमें धर्म और जाति की बाधा मनुष्यता विरोधी है। इस युद्ध में हिंसा जीतती है, झूठा अहंकार विजयी होता है, मनुष्यता हार जाती है । उपन्यास की कथा को साहानी ने इस तरह बुना है कि समाज के सारे अंतर्विरोध एक-एक कर सामने आते जाते हैं।

कहानीकार भीष्म साहनी के कहानी संग्रहों का अध्ययन करने से उनकी कहानीयात्रा का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। वह कहानियों में सामाजिक यथार्थ के ऊपरी परतों को तोड़ते हुए गहराई में उतरते चले जाते हैं।

उनका प्रथम कहानी संग्रह 'भाग्य रेखा' सन्1953 ई० में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में 14 कहानियां हैं । कहानीकार इनमें यथार्थ की जमीन पर पैर रखते हुए दिखाई देते हैं। सभी कहानियों में उनकी सामाजिक दृष्टि लगभग सतही है। यद्यपि उनमें मार्क्सवादी चेतना भी रही है तथापि वस्तु तथ्य को देखने का दृष्टिकोण बहुत गहरा नहीं हो सका है।

उनका दूसरा संग्रह 'पहला पाठ' सन् 1957ई०में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की कहानियों में पहले की अपेक्षा दृष्टि-समझ तथा सामाजिक चेतना का विकास साफ दिखाई देता है। इन कहानियों में सामाजिक अंत विरोध तो विद्यमान है किंतु उस तक पहुंचने के लिए कहानीकार की दृष्टि पूरी दूरी तय नहीं कर पाई है।इस संबंध में संपादक राजेश्वर सक्सेना और प्रताप ठाकुर का कथन है – "अंतर्विरोध को पकड़ने की उनकी गंभीर दृष्टि और यथार्थ अंकन कि सूक्ष्मकला इन कहानियों में विकसित नहीं हो पाई है। हम केवल संवेदना के स्तर पर उससे जुड़ सकते हैं लेकिन कोई सार्थक कलात्मकता के दर्शन इन प्रारंभिक कहानियों में नहीं कर सकते।" [10]

उनका तीसरा कहानी संग्रह 'भटकती राख' है जो सन् 1966 ई० में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में 20 कहानियां संकलित हैं । संग्रह में कहानीकार भीष्म की सामाजिक चेतना, समाज के अंतर्विरोधों और सामाजिक यथार्थ के बीच जीवन को देखने की शक्ति से परिचित हो जाती है। वह जन-विरोधी शक्तियों का टकराहट से उत्पन्न होने वाले द्वंदात्मक रिश्तों के बीच चरित्र की संघर्षशीलता और पलायनवादिता को सम्यक् रूपेण पकड़ने लगते हैं। "उनकी इन कहानियों में हर पात्र अपनी संवेदना के तहत अपने आरोपित संस्कार से लड़ता नजर आता है और उसकी इस लड़ाई में समूचा परिवेश सम्बद्ध हो जाता है।" [11] सन् 1973ई० में प्रकाशित होने वाला

उनका चौथा कहानी संग्रह है – 'पटरियाँ" जिसमें समाज के अनेक लोगों और पात्रों को खोलकर देखने की क्षमता कहानीकार की दृष्टि में आ चुकी है। इसलिए यहां कहानीकार वैचारिक धरातल पर अधिक और सामाजिक कारणों से आने वाली परिवर्तनशीलता को खुली आंखों से देखते हैं। इस संग्रह की कहानियां समाज की अनेक विसंगतियों के क्रम को पकड़ने के प्रयास में अलगअलग कहानियां होते हुए भी आपस में जुड़कर सातवें और आठवें दशक के भारतीय समाज को विभिन्न कोणों से स्पर्श करती हुई दिखाई देती हैं ।

भीष्म साहनी का पांचवा कहानी संग्रह है 'वाड्.चू' सन् 1978ई० में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में 11 कहानियां संकलित हैं। इन कहानियों में कहानीकार का वैचारिक स्वर अधिक ऊंचाई पर सुनाई देता है। इन कहानियों में वर्गभेद और वर्ग संघर्ष दिखाई पड़ता है। यही इन कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है। वर्ग संघर्ष की स्थिति 'साग मीट', 'पिकनिक' और 'मालिक का बंदा' आदि कहानियों में दिखाई देती है। संग्रह की सबसे सशक्त कहानी 'वाड्.चू' है। 'वाड्.चू' भारत और चीन की बदली हुई राजनीति में एक बौद्ध भिक्षु की कहानी है जिसमें कहानीकार महत्वपूर्ण प्रश्न की गुत्थी का समाधान करते हैं।

सन् 1981ई० में प्रकाशित 'शोभायात्रा' छठवां कहानी संग्रह है जिसमें 10 कहानियां संकलित हैं। कहानीकार इन कहानियों में सामाजिक जीवन पर प्रभाव डालने वाले उत्पादन संबंधों के बारीक तंतुओं को प्रस्तुत करते हैं। कुल मिलाकर यह कहानियां आठवें दशक के अंत और नवे दशक के प्रारंभ के भारतीय समाज में विकसित हो रहे पूंजीवादी मूल्यों पर आधारित हैं। सन् 1983ई० में प्रकाशित भीष्म साहनी जी के सातवें कहानी संग्रह 'निशाचर' में भारतीय समाज के मध्य वर्ग का चरित्र अधिक अमानवीय, अधिक संवेदनशील और अधिक खोखले आदर्शों के रूप में अंकित हुआ है।इसके पात्र व्यक्ति-अनुभव से हटकर आसपास की दुनिया से आने लगते हैं। इस संबंध में स्वयं कहानीकार का अभिमत है – "लेखक पात्रों के सृजन में अपने निजी अनुभव क्षेत्र से हटकर आसपास जीवन में से पात्र उठाने लगता है और उन्हें एक स्वतंत्र व्यक्तित्व प्रदान करता है। जब उसके पात्र स्मृतियों के बल पर नहीं, अपने से बाहर के जीवन की ऊहापोह में से निकलकर सामने आते हैं और स्वतंत्र व्यक्तित्व ग्रहण करते हैं तो ऐसे सजीव पात्रों की सृष्टि कला के क्षेत्र में लेखक की बहुत बड़ी उपलब्धि मानता हूँ।"[12]

संक्षेप में कहा जा सकता है किभीष्म साहनी एक कुशल कथाकार हैं।जनतांत्रिक मूल्यों के पक्षधर और रचनात्मक स्तर पर उन मूल्यों को स्थापित करने के लिए सक्रिय भीष्म साहनी को एक मानवतावादी साहित्यकार की संज्ञा दी जा सकती है और वस्तुतः वह किसी वर्ग विशेष के रचनाकार ना होकर सामाजिक यथार्थ के साहित्यकार हैं यही उनका हिंदी साहित्य को योगदान है।

संदर्भ :-

1. संपादक: राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर – 'भीष्म साहनी: व्यक्ति और रचना' के अंतर्गत दिनेश शर्मा द्वारा लिखित 'बातचीत' पृष्ठ 25
2. भीष्म साहनी: 'मेरा प्रिय पात्र' सारिका, पृष्ठ 26, 1 फरवरी 1982
3. संपादक: राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर, 'भीष्म साहनी: व्यक्ति और रचना' के अंतर्गत असगर वजाहत द्वारा लिखित 'बातचीत' पृष्ठ 11
4. संपादक: राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर – 'भीष्म साहनी: व्यक्ति और रचना' के अंतर्गत कृष्णा सोबती द्वारा लिखित 'हम हशमत' पृष्ठ 63
5. डॉ. चमनलाल 'प्रतिनिधि हिंदी उपन्यास' हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़ प्रथम संस्करण 1998 पृष्ठ 126
6. भीष्म साहनी – 'बसंती', पृष्ठ 10
7. रविंद्र गासो: भीष्म साहनी की औपन्यासिक चेतना, पृष्ठ 89, दीपक पब्लिसर्स माई हीरा गेट, जालंधर
8. भीष्म साहनी - 'मय्यादास की माँड़ी', पृष्ठ 21
9. भीष्म साहनी - 'मय्यादास की माँड़ी', पृष्ठ 66
10. संपादक राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना' पृष्ठ 108
11. संपादक राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर 'भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना' में संकलित 'सृजनशील यथार्थ', पृष्ठ 80
12. भीष्म साहनी – 'मेरा प्रिय पात्र', सारिका में लिखित, 1 फरवरी सन् 1982 पृष्ठ 27